दिल्ली उच्च न्यायालयः नई दिल्ली

फैसले की तारीखः12 मई, 2023

इस मामले में:

रि.या.(सि.) 12076/2022

चरणजीत सिंह अहलूवालिया ...याचिकाकर्ता

द्वाराः श्री सुदर्शन राजन, श्री हितेन बजाज, अधिवक्तागण

बनाम

भारत संघ ...प्रत्यर्थी

द्वाराः श्री रवि प्रकाश, श्री फरमान अली, सुश्री अस्तू खंडेलवाल, अधिवक्तागण

कोरमः
माननीय मुख्य न्यायाधीश
माननीय न्यायमूर्ति सुभ्रमोणयम प्रसाद

निर्णय

सुभ्रमोणयम प्रसाद, न्या.

1. तत्काल रिट याचिका माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों रखरखाव तथा कल्याण अधिनियम (इसके बाद "वरिष्ठ नागरिक अधिनियम" के रूप में संदर्भित) की धारा 23(1) की संवैधानिक वैधता को चुनौती देती है जिसके द्वारा यह धारा की

प्रयोज्यता को केवल वरिष्ठ नागरिक अधिनियम के प्रारंभ के उपरान्त एक वरिष्ठ नागरिक द्वारा की गई संपत्ति के उपहारों तक सीमित करता है|

2. रिट याचिका दायर करने के लिए संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं:-

. याचिकाकर्ता एक वरिष्ठ नागरिक है जिसे दिनांक 18.01.1950 के पट्टा विलेख और दिनांक 26.06.1962 के भवन के हस्तांतरण विलेख द्वारा एक संपत्ति सं. II-E/3, लाजपत नगर, नई दिल्ली का आवंटन हुआ था|

ii. यह बताया गया है कि याचिकाकर्ता के चार बेटे और चार बेटियां हैं| याचिकाकर्ता का कहना है कि उनके दो बेटों, रमनदीप सिंह अहलूवालिया और मंजीत सिंह अहलूवालिया ने उपरोक्त संपत्ति के प्रथम तल, बेसमेंट और भू-तल के समबन्ध में दिनांक 02.05.2007 को याचिकाकर्ता द्वारा धोखाधड़ी से उनके पक्ष में उपहार विलेख हस्ताक्षरित कर प्राप्त किए|

iii. यह बताया गया है कि उपहार देने के समय उक्त संपत्ति का किराया प्रत्येक मंजिल के लिए रु. 10 लाख से अधिक था| यह बताया गया है कि याचिकाकर्ता द्वारा उपहार में दी गई संपत्तियां याचिकाकर्ता के लिए आय का एक स्त्रोत थीं और उपहार विलेख निष्पादित होने के बाद, प्राप्त किराए को उनके दोनों बच्चों द्वारा विनियोजित किया जा रहा था जिन्हें संपत्तियां उपहार में दी गई थीं|

iv. यह कहा गया है कि याचिकाकर्ता के दोनों बेटे जिनके पक्ष में संपत्ति उपहार में दी गई है, वे याचिकाकर्ता की देखभाल नहीं कर रहे हैं| यह कहा गया है कि याचिकाकर्ता के साथ उसके दोनों बेटों ने हाथापाई की और उसे प्रताड़ित किया| यह कहा गया है कि चूंकि याचिकाकर्ता अब 97 वर्ष के हो गए हैं, इसलिए वह कमजोर और दुखी है और पुलिस में कोई शिकायत दर्ज कराने से अपने दोनों बेटों से डरते हैं|

V. याचिकाकर्ता का कहना है कि वह उन उपहारों को रद्द करना चाहते हैं जो उनके दोनों बेटों के पक्ष में दिए गए थे|

3. याचिकाकर्ता का कहना है कि वरिष्ठ नागरिक अधिनियम वर्ष 2008 में लागू हुआ था| वरिष्ठ नागरिक अधिनियम की धारा 23 निम्नानुसार है:-

> ***23. कुछ परिस्थितियों में संपत्ति का हस्तांतरण निश्चित रूप से शून्य होगा|-*** *(1) जहां कोई वरिष्ठ नागरिक, जिसने इस अधिनियम के प्रारंभ के पश्चात् अपनी संपत्ति का दान के रूप में या अन्यथा अंतरण इस शर्त के अधीन रहते हुए किया है कि अंतरिती, अंतरक को बुनियादी सुख-सुविधाएँ और बुनियादी भौतिक आवश्यकताएँ प्रदान करेगा और ऐसा अंतरिती ऐसी सुख-सुविधाओं और भौतिक आवश्यकताएँ प्रदान करने से इन्कार करेगा या असफल रहेगा तो संपत्ति का उक्त अंतरण कपट या प्रपीड़न या अनावश्यक प्रभाव के अधीन किया गया समझा जाएगा और अंतरक के विकल्प पर अधिकरण द्वारा शून्य घोषित किया जाएगा|*
>
> *(2) जहां किसी वरिष्ठ नागरिक को किसी संपदा से भरण-पोषण प्राप्त करने का अधिकार है और ऐसी संपत्ति या उसका भाग अंतरित कर दिया जाता है, यदि अंतरिती को उस अधिकार की जानकारी है या , यदि अंतरण बिना प्रतिफल के है तो भरण-पोषण प्राप्त करने का अधिकार अंतरिती के विरुद्ध प्रवृत किया जा सकेगा; न कि उस अंतरिती की विरुद्ध जो प्रतिफल के लिए है और जिसके पास अधिकार की सूचना नहीं है|*

(3) यदि कोई वरिष्ठ नागरिक उपधारा (1) और उपधारा (2) के अधीन अधिकारों को प्रवर्तित कराने में असमर्थ है तो धारा 5 की उपधारा (1) के स्पष्टीकरण में निर्दिष्ट किसी संगठन द्वारा उसकी ओर से कार्रवाई की जा सकेगी|

(जोर दिया गया)

4. संक्षेपित में याचिकाकर्ता चाहते हैं कि अधिनियम के प्रारंभ के पश्चात् शब्दों को वरिष्ठ नागरिक अधिनियम की धारा 23 से हटा दिया जाए या काट दिया जाए| यह कहा गया है कि वरिष्ठ नागरिक अधिनियम की धारा 23 को केवल संभावित रूप से पढ़ा जाता है| याचिकाकर्ता का मुख्य तर्क है कि यह धारा वरिष्ठ नागरिकों की सुरक्षा के लिए अधिनियम के उद्देश्य और प्रयोजन के विरुद्ध है| यह कहा गया है कि जिन वरिष्ठ नागरिकों ने अपने बच्चों या करीबी और प्रियजनों को इस उम्मीद के साथ अपनी संपत्ति उपहार में दी है कि वे उनकी देखभाल करेंगे, उनका रखरखाव उन व्यक्तियों द्वारा नहीं किया जा रहा है जिन्हें संपत्ति उपहार में दी गई है, बल्कि उन्हें प्रताड़ित किया जा रहा है और उनके साथ दुर्व्यवहार किया जा रहा है| यह प्रस्तुत किया जाता है कि ऐसे परिदृश्य में अधिनियम को इस तरह से पढ़ा जाना चाहिए ताकि वरिष्ठ नागरिकों को अधिनियम के प्रारंभ से पहले उनके द्वारा दिए गए उपहारों को रद्द करने की अनुमति मिल सके| संक्षेप में, याचिकाकर्ता प्रस्तुत करता है कि अधिनियम को एक भूतलक्षी प्रभाव दिया जाना चाहिए| याचिकाकर्ता के अनुसार, अधिनियम को निम्नानुसार पढ़ा जाना चाहिएः-

> ***धारा 23.*** *निश्चित परिस्थितियों में संपत्ति का हस्तांतरण शून्य होगा/- (1) जहां कोई वरिष्ठ नागरिक, जिसने अपनी संपत्ति का दान के रूप में या अन्यथा अंतरण इस शर्त के अधीन रहते हुए किया है कि अंतरिती, अंतरक को बुनियादी सुख-सुविधाएँ और बुनियादी भौतिक आवश्यकताएँ प्रदान करेगा और ऐसा अंतरिती ऐसी सुख-सुविधाओं और भौतिक आवश्यकताएँ प्रदान करने से इन्कार करेगा या असफल रहेगा तो संपत्ति का उक्त अंतरण कपट या प्रपीड़न या अनावश्यक प्रभाव के अधीन किया गया समझा जाएगा और अंतरक के विकल्प पर अधिकरण द्वारा शून्य घोषित किया जाएगा/*

5. निस्संदेह, वरिष्ठ नागरिक अधिनियम को भारत के संविधान के तहत गारंटीकृत माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों के रखरखाव और कल्याण के लिए प्रभावी प्रावधानों के लिए लागू किया गया था।अधिनियम के उद्देश्यों और कारणों का विवरण निम्नानुसार हैः-

> ***उद्देश्यों और कारणों का प्रकथन/–*** *पारंपरिक भारतीय समाज के मानदंडों और मूल्यों ने बुजुर्गों की देखभाल पर जोर दिया था/ हालाँकि, संयुक्त परिवार प्रणाली के बिगड़ने के कारण, बड़ी संख्या में बुजुर्गों की देखभाल उनके परिवार द्वारा नहीं की जा रही है/ नतीजतन, कई वृद्ध व्यक्ति, विशेष रूप से विधवा महिलाएं अब अपने वृद्धावस्था के समय को अकेले बिताने के लिए मजबूर हैं और भावनात्मक उपेक्षा और शारीरिक और आर्थिक सहायता की कमी से पीड़ित हैं/ इससे स्पष्ट रूप से पता चलता है कि वृद्धावस्था एक बड़ी सामाजिक चुनौती बन गई है और वृद्ध व्यक्तियों की देखभाल और सुरक्षा पर अधिक देखभाल की आवश्यकता है/ हालाँकि माता-पिता दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के तहत भरण-पोषण का दावा कर सकते हैं,*

लेकिन यह प्रक्रिया समय लेने के साथ-साथ महंगी भी है| इसलिए, माता-पिता के लिए भरण-पोषण का दावा करने के लिए सरल, सस्ते और त्वरित प्रावधानों की आवश्यकता है|

2. विधेयक उन व्यक्तियों पर जो बच्चों या उनके वृद्ध रिश्तेदारों की संपत्ति के उत्तराधिकारी बनते है उन व्यक्तियों पर ऐसे वृद्ध रिश्तेदारों के भरण-पोषण का दायित्व डालने का प्रस्ताव रखता है और गरीब वृद्ध व्यक्तियों को भरण-पोषण प्रदान करने के लिए वृद्धाश्रम स्थापित करने की योजना का प्रावधान भी प्रस्ताव करता है|

विधेयक में वरिष्ठ नागरिकों को बेहतर चिकित्सा सुविधाएं प्रदान करने और उनके जीवन और संपत्ति की सुरक्षा के प्रावधानों का भी प्रस्ताव देता है|

3. इसलिए विधेयक प्रदान करने का प्रस्ताव करता है कि-

(क) माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों को आवश्यकता-आधारित भरण-पोषण प्रदान करने के लिए उचित तंत्र स्थापित करने का प्रावधान बनाने का प्रस्ताव है|

(ख) वरिष्ठ नागरिकों को बेहतर चिकित्सा सुविधाएं प्रदान करना;

(ग) वृद्ध व्यक्तियों के जीवन और संपत्ति की सुरक्षा के लिए एक उपयुक्त तंत्र के संस्थानीकरण के लिए;

(घ) प्रत्येक जिले में वृद्धाश्रमों की स्थापना करना|

4. विधेयक उपरोक्त उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयास करता है|

6. उस उद्देश्य के बावजूद जिसके लिए अधिनियम को लागू किया गया था, विधानमंडल द्वारा अधिनियमित वरिष्ठ नागरिक अधिनियम की धारा 23 अधिनियम के प्रारंभ होने के पश्चात ही धारा को सक्रिय बनाती है| विधायिका का इरादा यह नहीं था कि धारा 23 को भूतलक्षी रूप से पढ़ा जाए|

7. यह अच्छी तरह से तय किया गया है कि जब तक अधिनियम की शर्तें स्पष्ट रूप से प्रदान नहीं करती हैं या आवश्यक रूप से इसका महत्त्व नहीं है, तब तक किसी अधिनियम को भूतलक्षी संचालन नहीं दिया जाना चाहिए, जिसका प्रभाव दूसरों के पक्ष में बनाए जा रहे अधिकारों पर होगा| गोविंद दास & अन्य बनाम आयकर अधिकारी & अन्य **1976 (1) एससीसी 906** के मामले में शीर्ष न्यायालय ने निम्नलिखित रूप से माना है कि:-

> ***11. अब यह समय द्वारा पूर्ण रूप से स्थापित प्रतिष्ठित स्पष्टीकरण और न्यायिक निर्णयों द्वारा पवित्रिकृत व्याख्या है कि, जब तक कि किसी क़ानून की शर्तें स्पष्ट रूप से ऐसा प्रदान नहीं करती हैं या आवश्यक रूप से इसकी जरुरत नहीं है, तब तक किसी क़ानून को भूतलक्षी संचालन नहीं दिया जाना चाहिए ताकि किसी मौजूदा अधिकार को छीना या बाधित किया जा सके या एक नया दायित्व बनाया जा सके या एक नया दायित्व लागू किया जा सके नहीं तो जैसा कि प्रक्रिया के विषय से संदर्भित है|*** *सामान्य नियम जैसा कि हैल्सबरी ने इंग्लैंड की विधियों के 36वां वोल्यूम (तीसरी संस्करण) धारा में कहा है और इस न्यायालय के साथ-साथ अंग्रेजी न्यायालयों के कई निर्णयों में दोहराया गया है कि*

उन कानूनों के अलावा अन्य सभी कानून जो केवल घोषणात्मक हैं या जो केवल प्रक्रिया या साक्ष्य के मामलों से संबंधित हैं, प्रथमदृष्टया संभावित हैं

और किसी अधिनियम को भूतलक्षी संचालन नहीं दिया जाना चाहिए जिससे किसी मौजूदा अधिकार को प्रभावित, बदला या नष्ट किया जा सके या कोई नया कर्तव्य या दायित्व पैदा किया जा सके जब तक कि अधिनियम की भाषा के साथ हिंसा/छेड़छाड़ किए बिना उस प्रभाव से बचा नहीं जा सकता है| यदि अधिनियम को ऐसी भाषा में व्यक्त किया जाता है जो किसी भी व्याख्या में पर्याप्त रूप से योग्य है, तो इसे केवल संभावित के रूप में माना जाना चाहिए.....

(जोर दिया गया)

8. इसी प्रकार, <u>आयकर आयुक्त (केन्द्रीय)-I, नई दिल्ली बनाम वाटिका टाउनशिप प्राइवेट लिमिटेड,</u> **(2015) 1 एससीसी 1** में, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार मत व्यक्त किया है:-

28. *किसी विधान की व्याख्या कैसे की जाए, इसका मार्गदर्शन करने वाले विभिन्न नियमों में से एक स्थापित नियम यह है कि जब तक कोई विपरीत इरादा प्रकट नहीं होता है, तब तक एक विधान का भूतलक्षी संचालन का इरादा नहीं माना जाता है| नियम के पीछे का विचार यह है कि एक वर्तमान कानून को वर्तमान गतिविधियों को नियंत्रित करना चाहिए| आज पारित की गई विधि अतीत की घटनाओं पर लागू नहीं हो सकती है| अगर हम आज कुछ करते हैं, तो हम इसे आज में लागू विधि को ध्यान में रखते हुए करते हैं, न कि कल के*

पिछड़े समायोजन को ध्यान में रखते हुए| कानून की प्रकृति में हमारा विश्वास इस आधार पर स्थापित है कि प्रत्येक मनुष्य को मौजूदा कानून पर भरोसा करके अपने मामलों की व्यवस्था करने का अधिकार है और यह नहीं देखना चाहिए कि उसकी योजनाएं भूतलक्षी रूप से प्रभावित हुई हैं| विधि का यह सिद्धांत लेक्स प्रॉस्पिसिट नॉन रेस्पिसिट के रूप में जाना जाता है: कानून आगे की ओर देखता है पीछे की ओर नहीं| जैसा कि फिलिप्स बनाम आयर [(1870) एलआर 6 क्यू.बी. 1] में देखा गया था, एक भूतलक्षी विधान इस सामान्य सिद्धांत के विपरीत है कि जिस विधान द्वारा मानव जाति के आचरण को विनियमित किया जाना है, जब पहली बार भविष्य के कार्यों से निपटने के लिए पेश किया जाता है, तो पिछले लेनदेन के चरित्र को नहीं बदला जाता है जो तत्कालीन मौजूदा कानून के विश्वास पर किए गए थे|

9. आयकर आयुक्त 5 मुंबई बनाम एस्सार टेलीहोल्डिंग्स लिमिटेड, **(2018) 3 एससीसी 253** मामले में शीर्ष अदालत ने निम्नलिखित टिप्पणी की हैः-

***22.** विधायिका के पास उन्हें सौंपे गए क्षेत्रों के भीतर विधि बनाने की पूर्ण शक्ति है; यह संभावित रूप से और साथ ही भूतलक्षी रूप से कानून बना सकती है| यह वैधानिक निर्माण का एक स्थापित सिद्धांत है कि प्रत्येक अधिनियम प्रथमदृष्टया संभावित है जब तक कि यह स्पष्ट रूप से या भूतलक्षी संचालन के लिए किए गए आवश्यक निहितार्थों से न हो| लीगल मैक्सिम नोवा कांस्टीट्यूशियो फ्यूचरिस फॉर्मम इम्पोनेरे डेबेट नॉन प्रेटेरिटिस अर्थात एक नए अधिनियम को विनियमित करना चाहिए कि क्या पालन करना है, न कि*

अतीत में, एक विधि की संभावना के अनुमान का सिद्धांत होना चाहिए|

10. <u>पद्म सुंदरा राव बनाम त.न. राज्य</u> **(2002) 3 एससीसी 533** में उच्चतम न्यायालय की संविधान पीठ ने, कानून के किसी भी प्रावधान को जोड़ने, घटाने या संशोधित करने की न्यायालय की शक्तियों पर विचार करते हुए निम्नानुसार माना है कि:-

12. अधिनियम के पुनर्लेखन और केसस ओमिसस के संबंध में प्रतिद्वंद्वी दलीलों पर सावधानीपूर्वक विचार करने की आवश्यकता है| यह कानून में अच्छी तरह से स्थापित सिद्धांत है कि न्यायालय किसी वैधानिक प्रावधान में कुछ भी नहीं पढ़ सकती है जो सरल और सुस्पष्ट है| अधिनियम विधायिका का एक आदेशपत्र है| अधिनियम में प्रयुक्त भाषा विधायी आशय का निर्धारक कारक है| निर्माण का पहला और प्राथमिक नियम यह है कि विधान का इरादा विधायिका द्वारा उपयोग किए जाने वाले शब्दों में पाया जाना चाहिए| प्रश्न यह नहीं है कि क्या माना जा सकता है और क्या कहना चाहा है, बल्कि यह है कि क्या कहा गया है| कानूनों को समझा जाना चाहिए, यूक्लिड के सिद्धांतों के रूप में नहीं, विद्वान न्यायाधीश लर्नड हैंड ने कहा है कि, बल्कि शब्दों को उनके पीछे के उद्देश्यों की कुछ कल्पना के साथ समझा जाना चाहिए| (लेनिघ वैली कोल को. वी. येनसावेज [218 एफआर 547 को देखें]|) इस विचार को भारत संघ बनाम फिलिप टियागो डी गामा ऑफ वेडेम वास्को डी गामा [(1990) 1 एससीसी 277 : AIR 1990 एससी 981 में दोहराया गया था]|

13. डी.आर. वेंकटाचलम बनाम डी. ट्रांसपोर्ट आयु. [(1977) 2 एससीसी 273 : एआईआर 1977 एससी 842] में यह मत व्यक्त किया गया था कि न्यायालयों को वैचारिक संरचना या योजना की अपनी पूर्वकल्पित धारणाओं के आधार पर किसी प्रावधान के अर्थ के प्राथमिकता से निर्धारण के खतरे से बचना चाहिए, जिसमें व्याख्या किए जाने वाले प्रावधान कुछ हद तक सटीक बैठते हैं| वे व्याख्या के भेष में विधायी कार्य को हड़पने के हकदार नहीं हैं|

14. किसी प्रावधान की व्याख्या करते समय न्यायालय केवल कानून की व्याख्या करता है और इसे लागु नहीं कर सकता है| यदि कानून के किसी प्रावधान का दुरुपयोग किया जाता है और कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग किया जाता है, तो यह विधायिका का काम है कि इसे संशोधित, रूपांतरण या निरस्त किया जाए, यदि आवश्यक समझा जाए| (ऋषभ एग्रो इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम पी.एन.बी. मूलधन सर्विसेज लिमिटेड [(2000) 5 एससीसी 515]) देखें| विधायी केसस ओमिसस का समर्थन न्यायिक व्याख्यात्मक प्रक्रिया द्वारा नहीं हो सकता| धारा 6 (1) की भाषा सरल और सुस्पष्ट है| इसे कुछ और समझने की गुंजाइश नहीं है, जैसा कि नरसिम्हा मामले [(1996) 3 एससीसी 88] में किया गया था| नंजुदैया मामले [(1996) 10 एससीसी 619] में उच्च न्यायालय के आदेश की सेवा की तारीख से समय की अवधि को आगे बढाया गया था और समय हेतु| ऐसा दृष्टिकोण धारा 6 (1) की भाषा के साथ नहीं मिलाया जा सकता| यदि दृष्टिकोण को स्वीकार कर लिया जाता है तो इसका अर्थ यह होगा कि कोई मामला न केवल धारा 6 (1) के परन्तुक के खंड (i) और/या खंड (ii) द्वारा, बल्कि एक गैर-

निर्धारित अवधि द्वारा भी कवर किया जा सकता है| यही कभी भी विधायी इरादा नहीं हो सकता है|

15. *निर्माण के दो सिद्धांत - पहला कैसस ओमिसस से संबंधित और दूसरा समग्र रूप से अधिनियम को पढ़ने के संबंध में - सुस्थापित प्रतीत होते हैं। प्रथम सिद्धांत के अधीन न्यायालय द्वारा, स्पष्ट आवश्यकता के मामले को छोड़कर और जब इसका कारण विधि के परिधि के भीतर ही पाया जाता है, एक कैसस ओमिसस की आपूर्ति नहीं की जा सकती है, लेकिन साथ ही एक कैसस ओमिसस का आसानी से अनुमान नहीं लगाया जाना चाहिए और उस उद्देश्य के लिए एक विधि या धारा के सभी भागों का एक साथ अर्थ लगाया जाना चाहिए और एक धारा के प्रत्येक खंड का संदर्भ और उसके अन्य खंडों के संदर्भ में अर्थ लगाया जाना चाहिए ताकि एक विशेष अधिनियम पर रखा जाने वाला निर्माण पूरी विधि का सुसंगत अधिनियमन करे। यह और भी अधिक होगा यदि किसी विशेष खंड के शाब्दिक निर्माण से स्पष्ट रूप से अर्थहीन ; बेतुका या विसंगत परिणाम सामने आते हैं जो विधायिका द्वारा अभिप्रेत नहीं हो सकते थे। "एक अनुचित परिणाम उत्पन्न करने का इरादा", डैनक्वर्टस, एल.जे. ने आर्टेमिउ बनाम प्रोकोपियो [(1966) 1 क्यूबी 878 : (1965) 3 आल ईआर 539 : (1965) 3 डब्ल्यूएलआर 1011 (सीए)] (एट ऑल ईआर पृ. 544-I), में कहा, "यदि कोई अन्य निर्माण उपलब्ध है तो इसे किसी अधिनियम में आरोपित नहीं किया जाना है। जहां शब्दों को शाब्दिक रूप से लगाने से, "विधि के स्पष्ट इरादे को विफल कर देगा और पूरी तरह से अनुचित परिणाम उत्पन्न करेगा", हमें "शब्दों पर कुछ हिंसा करनी चाहिए" और इसलिए उस स्पष्ट इरादे को प्राप्त करना चाहिए और एक तर्कसंगत निर्माण करना चाहिए। [ल्यूक बनाम आईआरसी में पर लॉर्ड रीड*

[1963 एसी 557 : (1963) 1 ऑल ईआर 655 : (1963) 2 डब्ल्यूएलआर 559 (एचएल)] जहां एसी पृ. 577 जहाँ उन्होंने यह भी पाया : (सभी ईआर पृ. 664-I) "यह कोई नई समस्या नहीं है, हालांकि प्रारूपण का हमारा मानक ऐसा है कि यह शायद ही कभी उभरती है।"]"

11. मीत मल्होत्रा बनाम सचिव द्वारा भारत संघ व अन्य के मामले में, इस पीठ ने **ले.प.अ 532/2022** में आदेश दिनांकित 13.04.2023 में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया हैः-

"22. यह सुस्थापित है कि न्यायालयों को आम तौर पर विधायिका द्वारा उपयोग किए जाने वाले प्रत्येक शब्द को व्याकरणिक अर्थ देना चाहिए और इस नियम को आम तौर पर तब टाला जाता है जब उपयोग की जाने वाली भाषा अर्थहीन परिणामों की ओर ले जाएगी। सर्वोच्च न्यायालय ने जी. नारायणस्वामी बनाम जी. पन्नीरसेल्वम, (1972) 3 एससीसी 717 में इसकी संक्षिप्त व्याख्या की है। उक्त निर्णय का प्रासंगिक उद्धरण इस प्रकार हैः

> *"4. अधिकारी निश्चित रूप से ऐसा नहीं चाहते हैं जो इंगित करता है कि न्यायालयों को उस दस्तावेज़ की व्यापक और उदार भावना से व्याख्या करनी चाहिए जिसमें देश की मौलिक विधि या उसकी सरकार के बुनियादी सिद्धांत शामिल हैं। फिर भी, मैक्सवेल की क़ानूनों की व्याख्या में "प्राथमिक नियम" के रूप में वर्णित "सादा अर्थ" या "शाब्दिक" व्याख्या के नियम को आज किसी भी दस्तावेज़ की व्याख्या में पूरी तरह से नहीं त्यागा जा सकता है। वास्तव में, हम लार्ड एवरशेड, एम.आर. को यह कहते हुए पाते हैं : "आधुनिक विधान*

की लंबाई और विस्तार ने निस्संदेह एकमात्र सुरक्षित नियम के रूप में शाब्दिक निर्माण के दावे को मजबूत किया है। (देखें : कानूनों की व्याख्या पर मैक्सवेल, 12वां संस्करण पृ. 28) ऐसा हो सकता है कि आधुनिक विधान का विशाल समूह, जिसका एक बड़ा हिस्सा वैधानिक नियमों से बना है, व्याख्या के शाब्दिक नियम से कुछ विचलन को अतीत की तुलना में आज अधिक आसानी से उचित बनाता है। लेकिन, व्याख्या और "निर्माण" (जो "व्याख्या" से व्यापक हो सकता है) का उद्देश्य हर मामले में विधि निर्माताओं के इरादे की खोज करना है (देखें : सांविधिक निर्माण पर क्रॉफर्ड, 1940 संस्करण, पैरा 157, पृ. 240-42)। यह उद्देश्य, जाहिर है, सबसे पहले प्रासंगिक प्रावधानों में उपयोग की जाने वाली भाषा को देखकर प्राप्त किया जा सकता है। अर्थ निकालने के अन्य तरीकों का सहारा केवल तभी लिया जा सकता है जब उपयोग की गई भाषा विरोधाभासी, अस्पष्ट या वास्तव में अर्थहीन परिणामों तक ले जाती हो। यह व्याख्या के साथ-साथ निर्माण प्रक्रियाओं का एक प्राथमिक और बुनियादी नियम है, जो लागू किए गए सिद्धांतों के दृष्टिकोण से, दोनों के सामान्य उद्देश्य की ओर एकजुट और अभिसरित होते है, जो वास्तविक अर्थ और आशय प्राप्त करना है, जहां तक ऐसा करना उचित रूप से संभव हो, जो निर्धारित किया गया है। जिन प्रावधानों का अर्थ विचाराधीन है, इसलिए निर्माण की किसी भी विधि को लागू करने से पहले उनकी जांच की जानी चाहिए। अब हम इन प्रावधानों की ओर रुख कर सकते हैं।"

(जोर दिया गया)

23. एक सामान्य नियम के रूप में, एक विधि की भाषा को जैसा है वैसा ही पढ़ा जाना चाहिए। जब विधायिका के इरादे में कोई संदिग्धता या अस्पष्टता न हो तो न्यायालयों को अधिनियम की विवेचना या व्याख्या करने का प्रयास नहीं करना चाहिए। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने जे.पी. बंसल बनाम राजस्थान राज्य, (2003) 5 एससीसी 134 में इस सिद्धांत की व्याख्या की है, जिसमें निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:

> *"14. हालाँकि, जहाँ शब्द स्पष्ट थे, वहाँ कोई अस्पष्टता नहीं है, कोई असंदिग्धता नहीं है और विधायिका का इरादा स्पष्ट रूप से व्यक्त किया गया है, न्यायालय के लिए वैधानिक प्रावधानों को संशोधित करने या बदलने का कार्य करने या अपने ऊपर लेने की कोई गुंजाइश नहीं है। उस स्थिति में न्यायाधीशों को यह घोषणा नहीं करनी चाहिए कि वे केवल न्यायिक वीरता के प्रदर्शन हेतु एक विधि निर्माता की भूमिका निभा रहे हैं। उन्हें याद रखना होगा कि एक रेखा है, हालांकि महीन है, जो न्यायनिर्णयन को विधान से अलग करती है। उस रेखा को पार या मिटाया नहीं जाना चाहिए। इसे "इसे पार न करने की आवश्यकता की एक सतर्क मान्यता और सहज ज्ञान के साथ-साथ ऐसा करने के लिए प्रशिक्षित अनिच्छा" द्वारा प्रदान किया जा सकता है। (देखें : फ्रैंकफर्टर : न्यायशास्त्र पर निबंध", कोलंबिया लॉ रिव्यू में कानूनों के पठन पर कुछ विचार, पृ. 51)*
>
> *16. इसलिए, जहां "भाषा" स्पष्ट है, वहां विधायिका का इरादा उपयोग की गई भाषा से एकत्र किया जाना है। ध्यान में रखने वाली बात यह है कि कानून में क्या कहा*

गया है और क्या नहीं कहा गया है। एक ऐसा निर्माण जिसके लिए शब्दों के समर्थन, जोड़ या प्रतिस्थापन की आवश्यकता होती है या जिसके परिणामस्वरूप शब्दों को अस्वीकृत किया जाता है, से बचा जाना चाहिए, जब तक कि यह आवश्यकता सहित अपवाद के नियम के अंतर्गत न आता हो, जो यहां मामला नहीं है। [देखें : ग्वालियर रेयॉन्स सिल्क एमएफजी (डब्ल्यूवीजी) कं. लिमिटेड बनाम कस्टोडियन ऑफ वेस्टेड फॉरेस्ट्स [1990 सुप्प एससीसी 785 : एआईआर 1990 एससी 1747] (पृ. 1752 पर एआईआर), श्याम किशोरी देवी बनाम पटना नगर निगम [एआईआर 1966 एससी 1678] (पृ. 1682 पर एआईआर) और ए. आर. अंतुले बनाम रामदास श्रीनिवास नायक [(1984) 2 एससीसी 500 : 1984 एससीसी (सीआरआई) 277] (पृ. 518, 519 पर एससीसी)।] वास्तव में, न्यायालय विधान को फिर से तैयार नहीं कर सकता क्योंकि उसके पास विधान बनाने की कोई शक्ति नहीं है। [देखें : केरल राज्य बनाम मथाई वर्गीज [(1986) 4 एससीसी 746 : 1987 एससीसी (सीआरआई) 3] (पृ. 749 पर एससीसी) और भारत संघ बनाम देवकी नंदन अग्रवाल [1992 सुप्प (1) एससीसी 323 : 1992 एससीसी (एल एंड एस) 248 : (1992) 19 एटीसी 219 : एआईआर 1992 एससी 96] (पृ. 101 पर एआईआर)।] "

(जोर दिया गया)

24. *निर्माण के शाब्दिक नियम के लिए आवश्यक है कि न्यायालयों को शब्दों को उनके स्वाभाविक, साधारण या लोकप्रिय अर्थों में समझना चाहिए और वाक्यांशों और वाक्यों को उनके व्याकरणिक अर्थ के अनुसार समझा जाना चाहिए।*

विजय नारायण थट्टे बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2009) 9 एससीसी 92 में, सर्वोच्च न्यायालय ने कहा:-

> *"22. हमारी राय में, जब अधिनियम की भाषा सीधी और स्पष्ट है तो व्याख्या का शाब्दिक नियम लागू किया जाना चाहिए और आम तौर पर समानता, लोक हित या विधायिका के इरादे पर विचार करने की कोई गुंजाइश नहीं है। यह केवल तभी जब कानून की भाषा स्पष्ट नहीं है या असंदिग्ध या कुछ संघर्ष आदि है या सीधी भाषा कुछ अर्थहीनता की ओर ले जाती है तब व्याख्या के शाब्दिक नियम से विचलित हो सकते हैं। धारा 6 के परन्तुक के अवलोकन से पता चलता है कि परन्तुक की भाषा स्पष्ट है। अतः व्याख्या का शाब्दिक नियम इस पर लागू किया जाना चाहिए। जब विधि और समानता के मध्य टकराव की स्थिति में विधि ही है जिसे प्रबल होना चाहिए। जैसा कि लैटिन सूत्रवाक्य ड्यूरा लेक्स सेड लेक्स में कहा गया है जिसका अर्थ है "विधि कठिन है लेकिन यह विधि है"।"*
>
> (जोर दिया गया)

25. *शाब्दिक व्याख्या के सिद्धांत के लिए यह भी आवश्यक है कि कानून में प्रत्येक शब्द को प्रभावी बनाया जाना चाहिए और यह धारणा है कि विधायिका द्वारा उपयोग किया जाने वाला प्रत्येक शब्द साभिप्राय है। नाथी देवी बनाम राधा देवी गुप्ता, (2005) 2 एससीसी 271 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय की एक संविधान पीठ ने कहा है किः*

> *"14. यह समान रूप से सुथापित है कि एक कानून की व्याख्या करते समय, विधायिका द्वारा उपयोग किए जाने*

वाले प्रत्येक शब्द को प्रभावी बनाने का प्रयास किया जाना चाहिए। न्यायालय हमेशा यह मानते हैं कि विधायिका उसके प्रत्येक भाग को एक उद्देश्य के साथ सम्मिलित करती है और विधायी इरादा यह है कि कानून के प्रत्येक भाग का प्रभाव होना चाहिए। एक ऐसा निर्माण जो विधायिका को अतिरेक के लिए जिम्मेदार ठहराता है, स्पष्ट प्रारूपण त्रुटियों जैसे बाध्यकारी कारणों को छोड़कर, को स्वीकार नहीं किया जाएगा। (देखें : उत्तर प्रदेश राज्य बनाम डॉ. विजय आनंद महाराज [एआईआर 1963 एससी 946 : (1963) 1 एससीआर 1], रणंजय सिंह बनाम बैजनाथ सिंह [एआईआर 1954 एससी 749 : (1955) 1 एससीआर 671], कनई लाल सूर बनाम परमनिधि साधुखान [एआईआर 1957 एससी 907 : 1958 एससीआर 360], न्यादार सिंह बनाम भारत संघ [(1988) 4 एससीसी 170 : 1988 एससीसी (एल एंड एस) 934 : (1988) 8 एटीसी 226 : एआईआर 1988 एससी 1979], जे. के. कॉटन एसपीजी. और डब्ल्यूवीजी. मिल्स कं. लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य [एआईआर 1961 एससी 1170] और घनश्यामदास बनाम सीएसटी [एआईआर 1964 एससी 766 : (1964) 4 एससीआर 436]।)"

12. भारत संघ के विद्वान अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि केरल उच्च न्यायालय ने इसी मुद्दे पर विचार करते हुए वरिष्ठ नागरिक अधिनियम की धारा 23 को भूतलक्षी प्रभाव देने से इनकार कर दिया और यह अभिनिर्धारित किया कि वरिष्ठ नागरिक अधिनियम की धारा 23 का उद्देश्य केवल भविष्यलक्षी प्रकृति का होना

था। अपने अध्यक्ष डॉ. विजीश सी. तिलक द्वारा मानवाधिकार एवं समाज कल्याण फोरम बनाम भारत संघ अपने सचिव द्वारा व अन्य, **2021 एससीसी ऑनलाइन केर 12268,** केरल उच्च न्यायालय की खण्ड पीठ ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:-

> *"**18.** अधिनियम, 2007 की धारा 23 के अनुसार, एक वरिष्ठ नागरिक या माता-पिता को अधिनियम, 2007 के तहत प्रदान किए गए मापदंडों के अनुसार बच्चों या रिश्तेदारों से भरण-पोषण की मांग करने के लिए अधिकरण से संपर्क करने का अधिकार है। अधिनियम, 2007 की धारा 23 एक स्वतंत्र उपबंध है जिसके द्वारा अधिकरण को विलेख में किए गए वचन के आधार पर उपहार के रूप में या अन्यथा किए गए किसी अंतरण की घोषणा करने की शक्तियां निहित हैं कि अंतरक की बुनियादी सुविधाओं और बुनियादी भौतिक आवश्यकताओं का ध्यान रखा जाएगा और अंतरिती विलेख में निहित वचनों का पालन करने में विफल रहता है।*
>
> ***19.** यह सत्य है कि धारा 23(1) के प्रावधानों और अन्य प्रावधान एक वरिष्ठ नागरिक या माता-पिता तक ही सीमित हैं, जिन्होंने अधिनियम के प्रारंभ के बाद ऐसी प्रकृति के विलेख को निष्पादित किया है। उक्त प्रावधान के गहन विश्लेषण पर, हम जो एकत्र कर सकते हैं वह यह है कि धारा 23(1) के तहत एक उपरिका प्रदान किया गया है यह सुनिश्चित करने के लिए कि अधिनियम के लागू होने से पहले निष्पादित किए गए कार्यों को परिवार में अप्रिय परिस्थितियों से बचने के लिए संरक्षित किया गया है, और यह भी ध्यान में रखते हुए कि समय बीतने के कारण, असंख्य स्थानांतरण हो सकते हैं और अंतरितीयों द्वारा विभिन्न अन्य प्रतिबद्धताएं की गई होंगी। इसलिए, अधिनियम, 2007 की धारा 23(1) में प्रश्नगत*

उपरिका को सम्मिलित करके एक स्पष्ट सम्बन्ध और उद्देश्य को प्राप्त करना चाहा गया है।

20. *जैसा कि हमने ऊपर बताया है, अधिनियम, 2007 का उद्देश्य वरिष्ठ नागरिकों के जीवन के सुनहरे दिनों के दौरान उनके हितों और कल्याण की रक्षा करना है। यह अधिनियम, 2007 की धारा 23(1) में पर्याप्त रूप से प्रतिबिंबित होता है, क्योंकि यह स्पष्ट रूप से कहता है कि अधिकरण के पास विलेख को शून्य घोषित करने की शक्तियां केवल तभी निहित हैं जब अंतरिती ने स्थानान्तरण को सुविधाएं और भौतिक आवश्यकताएं प्रदान करने से इनकार कर दिया है या विफल रहा है या ऐसा विलेख धोखाधड़ी या जबरदस्ती या अनुचित प्रभाव से किया गया था। धारा 23(1) की प्रकृति के संबंध में इस प्रश्न पर सुभाषिनी बनाम जिलाधिकारी [(2020) 5 केएलटी 533 (एफबी)] में इस न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा विचार किया गया था। अनुच्छेद 51 व 52 संदर्भ के लिए प्रासंगिक हैं, जो इस प्रकार हैं:*

> *"51. अत्यंत प्रासंगिक तथ्य यह है कि धारा 23(1) भविष्यलक्षी है और केवल अधिनियम के लागू होने के बाद निष्पादित समझौतों पर लागू होता है। धारा 23 केवल अधिनियम के प्रारंभ के बाद स्थानान्तरण पर लागू होती है। यह हमारी व्याख्या को और मजबूत करता है कि प्रावधान विलेख में एक स्पष्ट शर्त होने पर जोर देता है, जो विलेख में परिवर्णन के हिस्से के रूप में लिखा गया है। यदि यह अन्यथा था और जिन परिस्थितियों के कारण निष्पादन या आरक्षण खंड हुआ, उन पर निष्पादन को विनियमित करने वाली ऐसी शर्त का अनुमान लगाने*

या इंगित करने के लिए भरोसा किया जा सकता था, तो इसे समान प्रकृति के वरिष्ठ नागरिकों द्वारा निष्पादित किए गए सभी समय के कार्यों पर लागू किया जाता। अध्याय 5 के अधीन धारा 21 में बताए गए प्रचार के उपायों का उद्देश्य प्रत्येक वरिष्ठ नागरिक को भरण-पोषण के लिए प्रदान किए गए त्वरित उपचार के बारे में सूचित करना और एक अनावश्यक हस्तांतरण को निरस्त करना और उन्हें निर्दिष्ट की जाने वाली शर्त के बारे में सचेत करना है; जो दस्तावेज के परिवर्णन का एक हिस्सा होना चाहिए।

52. हम इस संदर्भ का उत्तर देते हुए निष्कर्ष निकालते हैं कि बुनियादी सुविधाओं और बुनियादी भौतिक सुविधाओं के प्रावधान हेतु धारा 23(1) के तहत आवश्यक शर्त एक वरिष्ठ नागरिक की आवश्यकता को हस्तांतरण के दस्तावेज में स्पष्ट रूप से बताया जाना चाहिए, जो हस्तांतरण केवल उपहार के रूप में ही हो सकता है या जो उपहार या इसी तरह के अनावश्यक हस्तांतरण के चरित्र को ग्रहण कर लेता है। यह अधिकारिता संबंधी तथ्य है, जिसे अधिकरण को धारा 23(1) का अवलंब लेने और संक्षिप्त जांच पर अग्रसर होने से पूर्व देखना होगा। हम डब्लू.ए. सं. 2012 / 2012 दिनांकित 28.11.2012 (मलुकुट्टी पोन्नारसेरी बनाम पी. राजन पोन्नारसेरी) के निर्णय से सहमत हो संदर्भ का उत्तर देते हैं। हम शबीन मार्टिन बनाम म्यूरिएल ((2017) 1 केएलटी (एसएन 2) 2 = 2016 (5) केएचसी 603) तथा सुंदरी बनाम राजस्व मंडल अधिकारी ((2018) 3 केएलटी 1082 = 2018 केएचसी 4655) को त्रुटिपूर्ण रूप से निर्णित पाते हैं। हम राधामणि बनाम केरल राज्य ((2016) 1 केएलटी 185 =

2016 (1) केएचसी 9) का अनुमोदन करते हैं, जिसका दस्तावेज में परिवर्णन था जो धारा 23(1) के अधीन अपेक्षित के समरूप था।

***21.** उपर्युक्त पर उचित विचार करते हुए, हमारा विचार है कि याचिकाकर्ता का यह कहना सही नहीं है कि धारा 23(1) में शामिल "इस अधिनियम के प्रारंभ के उपरांत" शब्द अवैध या मनमाना है, जो निरस्त किए जाने या संशोधित किए जाने को उचित ठहराता है ताकि प्रश्न में उपरिका के प्रभाव को समाप्त किया जा सके, और इसलिए उक्त प्रतिविरोध को विधि के अंतर्गत कायम नहीं रखा जा सकता है। हमारा स्पष्ट मत है कि प्रश्नगत उपरिका अधिनियम, 2007 की धारा 23(1) में ऊपर चर्चा किए गए प्रशंसनीय उद्देश्य के साथ बनाई गई है, और इसलिए संविधान के प्रावधानों के शक्त्याधीन है क्योंकि हम प्रावधान में किसी भी मनमानेपन या अवैधता का पता नहीं लगा सके। इसे अन्यथा कहा जाए, याचिकाकर्ता ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत प्रदत्त रिट अधिकारिता का प्रयोग करते हुए हस्तक्षेप का कोई मामला नहीं बनाया है।"*

13. यह न्यायालय केरल उच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए दृष्टिकोण से सहमत है। अधिनियम का उद्देश्य आदाता के अधिकारों को बाधित करना नहीं था जो पहले से सृजित और उसमें निहित है। विधानमंडल इस तथ्य को लेकर सचेत है कि दाता के निहित अधिकारों को इस तथ्य के बावजूद भूतलक्षी प्रभाव नहीं दिया जानी चाहिए कि अधिनियम का उद्देश्य वरिष्ठ नागरिकों के कल्याण के उपायों का प्रावधान करना है। यह *कैसुस ओमिसुस* का मामला नहीं है और यह न्यायालय

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए यह प्रावधान नहीं कर सकता है जो विधायिका का इरादा नहीं था।

14. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, यह न्यायालय वर्तमान मामले को भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत अपनी अधिकारिता का प्रयोग करने के लिए उपयुक्त नहीं पाता है। हालांकि, यह स्पष्ट किया जाता है कि यदि याचिकाकर्ता वरिष्ठ नागरिक अधिनियम के तहत सक्षम प्राधिकारी से संपर्क करता है, तो सक्षम प्राधिकारी को विधि अनुसार याचिकाकर्ता के वाद को न्यायनिर्णित करने का निर्देश दिया जाता है।

15. इन टिप्पणियों के साथ, याचिका को लंबित आवेदन(नों), यदि कोई हो, के साथ खारिज किया जाता है।

सतीश चंद्र शर्मा, मुख्य न्या.

सुब्रमोणियम प्रसाद, न्या.

12 मई, 2023
एचएसके/एसएस

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्द्मेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा/ समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*